पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त
(PRINCIPLES OF CURRICULUM CONSTRUCTION)

किसी भी समाज के लिए शिक्षा के पाठ्यक्रम का निर्धारण करने में दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व वैज्ञानिक विचारधाराओं, सामाजिक मूल्यों, विश्वासों एवं परम्पराओं व राजनीतिक विचारधारा आदि कारकों की महती भूमिका होती है। उदाहरणार्थ दार्शनिक विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम का निर्माण समाज के उद्देश्यों के अनुरूप किया जाना चाहिए। मनोवैज्ञानिक विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम के निर्माण के समय सबसे अधिक बल बालकों की रुचि, रुझान व योग्यता पर दिया जाना चाहिए, वैज्ञानिक आधार पर संगठित पाठ्यक्रम के निर्माण की वैज्ञानिक प्रकृति के विकास पर बल दिया जाना चाहिए। भारत एक जनतन्त्र राज्य होने के कारण पाठ्यक्रम के निर्धारण में जनतन्त्रीय आदर्शों का समावेश किया जाना प्रायः अपेक्षित होता है अतः पाठ्यक्रम निर्माण के सम्बन्ध में जो प्रमुख सिद्धान्त भारत के विद्यालयों में अपनाये जायें, वे जनतन्त्रीय भावना के आधार पर होने चाहिए। इसके साथ ही आज विज्ञान की तीव्र गति व ज्ञान के विस्फोट तथा द्रुतगति से होने वाले नवीन आविष्कारों को देखते हुए यह अपेक्षित है कि विज्ञान तथा वैज्ञानिक प्रवृत्ति को विकसित करने वाले विषयों एवं क्रियाओं का समावेश आज के पाठ्यक्रम से एक अनिवार्य शर्त होनी चाहिए क्योंकि मानव के भौतिक जीवन के लिए क्या उपयोगी है तथा क्या नहीं तथा किसी वस्तु को मानव के लिए कैसे उपयोगी बनाया जा सकता है, इन प्रश्नों का समाधान विज्ञान ही कर सकता है। अतः इन दार्शनिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक प्रवृत्तियों के महत्व के आधार पर पाठ्यक्रम का निर्माण निम्न सिद्धान्तों के आधार पर किया जाना चाहिए—

1. जीवन से सम्बन्धित होने का सिद्धान्त (Principle of Relating with Life)—पाठ्यक्रम निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि पाठ्यक्रम में उन विषयों, क्रियाओं एवं वस्तुओं को शामिल किया जाये जो बालक के भावी जीवन से व वर्तमान जीवन से सम्बन्धित होने के साथ–साथ उसके लिए उपयोगी भी हो। बालक को उन्हीं विषयों के अध्ययन करने से जीवन में सफलता मिल सकती है जो उसकी वर्तमान रुचियों, आकांक्षाओं व योग्यताओं के अनुरूप हों। उनके पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वर्तमान जीवन से सम्बन्धित ऐसी विषय सामग्री व क्रियाएँ हों जिनका अध्ययन करके वे अपने जीवन की समस्याओं को अच्छी तरह समझ कर सुलझा सकें। पाठ्यक्रम में जीवन से असम्बन्धित पाठ्य–वस्तु तथा क्रियाएँ होने पर भावी जीवन के लिए उनका कोई उपयोग नहीं होता है।

2. शैक्षिक उद्देश्यों से अनुरूपता का सिद्धान्त (Principle of Conformity with the Aims of Education)—शिक्षा के उद्देश्यों को पाठ्यक्रम के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है अतः पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय शिक्षा के उद्देश्यों को निश्चित कर लेना चाहिए क्योंकि समय व परिस्थितियों के अनुसार शिक्षा व सामाजिक उद्देश्यों में परिवर्तन होता रहता है। इसलिए पाठ्यक्रम में उन्हीं विषयों एवं क्रियाओं का समावेश होना चाहिए जो शिक्षा के उद्देश्यों के अनुकूल हो। वर्तमान समय में शिक्षा का उद्देश्य बालकों का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं चारित्रिक विकास करने के साथ–साथ उन्हें किसी उद्योग अथवा उत्पादन कार्य में निपुण करना भी है अतः पाठ्यक्रम के निर्माण में इनके विकास हेतु ध्यान रखा जाना चाहिए यदि पाठ्यक्रम को अपनाने के बाद भी छात्र अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते हैं व इससे शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में भी बाधा पड़ सकती है।

3. बाल केन्द्रित शिक्षा का सिद्धान्त (Principle of Child Centre Education)—पाठ्यक्रम बाल केन्द्रित शिक्षा के सिद्धान्त पर अर्थात् बालकों की रुचियों, आवश्यकताओं, क्षमताओं, योग्यताओं, मनोवृत्तियों, वृद्धि एवं आयु के अनुकूल होना चाहिए। चूँकि सभी विद्यार्थियों की रुचियाँ, आवश्यकताएँ व योग्यताएँ एक समान नहीं होती हैं अतः पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय विद्यार्थी की रुचियों, आवश्यकताओं व योग्यताओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए ताकि प्रत्येक विद्यार्थी उस पाठ्यक्रम को अपनाकर अपना विकास कर सके। शिक्षा का केन्द्र बिन्दु विद्यार्थी होता है इसलिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया विद्यार्थी के इर्द–गिर्द घूमना चाहिए। पाठ्यक्रम छात्रों की रुचियों व आवश्यकताओं को पूरा करने वाला होना चाहिए जिसमें छात्रों को पाठ्यक्रम का पूरा लाभ मिल सके व वे एक निश्चित स्तर की शिक्षा ग्रहण करने के बाद ज्ञान को भली प्रकार अर्जित कर सकें।

4. विविधता एवं लचीलेपन का सिद्धान्त (Principle of Variety and Flexibility)—पाठ्यक्रम में विविधता एवं लचीलेपन की आवश्यकता इसलिए भी है जिससे उसे छात्रों की रुचियों, योग्यताओं, विभिन्नताओं, दृष्टिकोणों, मनोवृत्तियों और आवश्यकताओं के अनुकूल बनाया जा सके। बालकों पर अनुपयुक्त विषयों को लादने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए इससे उनमें निराशा की भावना उत्पन्न होती है, साथ ही सामान्य विकास में बाधा पड़ती है।

5. अवकाश के सदुपयोग का सिद्धान्त (Principle of Proper use of Leisur)—पाठ्यक्रम इस प्रकार बनाया जाना चाहिए कि वह छात्रों को कार्य व अवकाश दोनों के लिए प्रशिक्षित करे। इसलिए अध्ययन के विषयों के साथ–साथ, पाठ्यक्रम में अन्य क्रियाओं को भी स्थान देना चाहिए; जैसे–खेलकूद, सामाजिक और सौन्दर्यात्मक क्रियाएँ आदि। ये क्रियाएँ बालकों को अपने अवकाश का सदुपयोग करने के लिए प्रशिक्षित करेंगी।

6. वैयक्तिक भिन्नताओं का सिद्धान्त (Principle of Individual Differences)—मनोविज्ञान ने आज यह सिद्ध कर दिया है कि बालकों में वैयक्तिक विभिन्नताएँ पायी जाती हैं इसलिए वर्तमान समय में पाठ्यक्रम के निर्माण में वैयक्तिक विभिन्नताओं के सिद्धान्त का भी ध्यान रखा जाता है। चूँकि प्रत्येक बालक की रुचियाँ आवश्यकताएँ, योग्यताएँ, मनोवृत्तियाँ एवं बुद्धि एक–दूसरे से भिन्न होती है तथा उनका अपना विशिष्ट व्यक्तित्व होता है इसलिए सभी के लिए एक समान पाठ्यक्रम की अवधारणा उपयुक्त नहीं है। अतः वैयक्तिक भिन्नताओं का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए।

7. सामुदायिक जीवन से सम्बन्ध का सिद्धान्त (Principle of Relationship with Community Life)—पाठ्यक्रम का सामुदायिक जीवन से स्पष्ट सम्बन्ध होना चाहिए। पाठ्यक्रम को इस जीवन की महत्वपूर्ण विशेषताओं की व्याख्या होनी चाहिए व छात्रों को इसकी कुछ महत्वपूर्ण क्रियाओं के सम्पर्क में लाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि पाठ्यक्रम में उत्पादक कार्यों को महत्वपूर्ण स्थान देना चाहिए, क्योंकि यह कार्य व्यवस्थित मानव जीवन का आधार है। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम स्थानीय आवश्यकताओं और परिस्थितियों को ध्यान में रखकर बनाना चाहिए।

8. उपयोगिता का सिद्धान्त (Principle of Utility)—इसके अनुसार पाठ्यक्रम में उन्हीं विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए जो बालकों के भावी जीवन में काम आ सके। **नन** (Nunn) का मानना है कि मनुष्य अपने बच्चों को केवल ज्ञान के प्रदर्शन के लिए व्यर्थ की बातें सिखाना नहीं चाहता है, बल्कि यह चाहता है कि बालकों को ऐसी बातें सिखाई जायें जो जीवन के लिए उपयोगी हों। क्या उपयोगी है और क्या अनुपयोगी, यह समय विशेष की विचारधारा निश्चित करती है। उदाहरणार्थ–लोकतन्त्रीय देशों में प्रत्येक बालक को अपनी मातृभाषा एवं राष्ट्र भाषा का ज्ञान होना चाहिए तथा उसे सामाजिक व्यवहार में निपुण भी होना चाहिए।

9. व्यापक दृष्टिकोण का सिद्धान्त (Principle of Descriptive Attitude)—पाठ्यक्रम संकीर्ण सोच पर आधारित नहीं होना चाहिए बल्कि व्यापक दृष्टिकोण पर आधारित होना चाहिए ताकि विद्यार्थियों की सोच संकीर्ण न रहकर व्यापक बन सके। इससे वे नए विषयों के सम्बन्ध में ज्ञान अर्जित कर सकते हैं। इस प्रकार पाठ्यक्रम को समाज के किसी एक पक्ष तक सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि उसे समाज, राष्ट्र व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक का ज्ञान प्रदान करना चाहिए। इसी प्रकार पाठ्यक्रम यदि व्यापकता के साथ ही आधुनिक दृष्टिकोण पर भी आधारित हो तो छात्रों के लिए अधिक लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

10. संगठन का विकास (Development of Organisation)—पाठ्यक्रम में छात्रों को विभिन्न विषयों का ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए। एक अच्छे पाठ्यक्रम में सभी विषयों का संगठन होना अति आवश्यक है क्योंकि प्रत्येक विषय का उद्देश्य विद्यार्थी का सम्पूर्ण विकास करना होता है। जब सभी विषयों को संगठित करके अध्यापक द्वारा कक्षा में पढ़ाया जाता है तो इसमें शिक्षण अधिगम प्रक्रिया प्रभावी बन जाती है। इससे शिक्षार्थी अधिगम में अधिक रुचि दिखाते हैं और आसानी से उस ज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं।

11. रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों के उपयोग का सिद्धान्त (Principle of Utilising Creative and Constructive Powers)—बालकों में रचनात्मक प्रवृत्ति अधिक होती है। अतः पाठ्यक्रम में ऐसे अवसर प्रदान किए जाने चाहिए जिससे उनकी रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों का अधिक–से–अधिक प्रयोग किया जा सके। इसके लिए बालकों को प्रोत्साहित भी किया जाना चाहिए तथा उचित निर्देशन प्रदान करना चाहिए। इस सिद्धान्त के महत्व के सम्बन्ध में **रेमाण्ट** ने लिखा है—"जो पाठ्यक्रम, वर्तमान एवं भविष्य की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त है उसमें निश्चित रूप से रचनात्मक विषयों के प्रति निश्चित सुझाव होना चाहिए।"

12. खेल एवं कार्य की क्रियाओं के अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त (Principle of Interrelation of Play and Work Activities)—बालक खेल की क्रियाओं में बहुत अधिक रुचि रखता है किन्तु कार्य के प्रति वह रुचि प्रदर्शित नहीं करता है। इसका कारण खेल द्वारा उसे आनन्द की अनुभूति मिलना है। अतः पाठ्यक्रम निर्माण में इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि ज्ञान सम्बन्धी क्रियाओं से भी बालकों को खेल की क्रियाओं के समान ही आनन्द प्राप्त हो सके। इसका आशय है कि पाठ्यक्रम में जिस विषय–वस्तु का ज्ञान हम छात्र को देना चाहते हैं उसे खेल की क्रियाओं से सम्बन्धित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

13. संस्कृति एवं सभ्यता के संरक्षण का सिद्धान्त (Principle of Preserving Culture and Civilization)—पाठ्यक्रम के निर्माण के समय इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसमें उन विषयों, वस्तुओं एवं क्रियाओं को अवश्य सम्मिलित किया जाये जिससे बालकों को अपनी संस्कृति एवं सभ्यता का ज्ञान प्राप्त हो तथा शिक्षा के द्वारा संस्कृति एवं सभ्यता का संरक्षण व विकास किया जा सके। अतः पाठ्यक्रम इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होना चाहिए।

14. अग्रदर्शिता का सिद्धान्त (Principle of Forward Looking)—पाठ्यक्रम निर्माण के प्रथम सिद्धान्त के अनुसार पाठ्यक्रम में उन्हीं विषयों एवं क्रियाओं को समाविष्ट करना चाहिए जो बालक के जीवन से सम्बन्धित हों, किन्तु सफल जीवन–यापन के लिए वर्तमान के साथ–साथ भावी जीवन के अनुकूलीकरण की दृष्टि से पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों, वस्तुओं एवं क्रियाओं को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए जो बालकों के जीवन में आने वाली समस्याओं एवं परिस्थितियों को समझने एवं उनका समाधान करने में सहायक सिद्ध हो सके।